जैन ग्रन्थों में वर्णित पर्यावरण संरक्षण

मृत्युंजय कुमार यादव

शोध छात्र (इतिहास), सामाजिक विज्ञान विभाग, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

सारांश

वर्तमान समय में प्राणी जगत में पर्यावरण संरक्षण एक बहुत बड़ी चुनौती है। यह तभी संभव है, जब सभी एकजुट होकर इसके संरक्षण हेतु प्रयास करें। प्राचीन काल में हमारे ऋशि–मुनियों ने अपने स्वाध्याय एवं चिन्तन द्वारा पर्यावरण को दूशित होने से बचाया एवं जनमानस को इसके प्रति प्रेरित एवं जागरुक भी किया। आज उसी प्रेरणा एवं जागरुकता की हमें आवश्यकता है। प्रस्तुत लेख में स्पश्ट है कि हमारे जैन पुराणों के अन्तर्गत किस प्रकार से पर्यावरण संरक्षण हेतु विभिन्न दृश्टिकोण प्रस्तुत किये गये हैं। आज हमें उसी दृश्टिकोण एवं विचारधारा का अनुगमन करने की आवश्यकता है।

''पर्यावरण'' शब्द अंग्रेजी के Environment का रूपान्तरण है। Environment शब्द Environer से बना है। जिसका अर्थ होता है To Surround (आस–पास होना)। अर्थात हमारे आस–पास रहने वाली बाहरी परिस्थितियों का समावेश हो जाना, इसके अन्तर्गत मानव के साथ ही आस–पास रहने वाले सजीव एवं निर्जीव दोनो घटक आ जाते है। मानवीय कल्याण व प्रगति की दृश्टि से प्रकृति का सदुपयोग बताने वाली प्रणाली के अध्ययन को पर्यावरण विज्ञान कहा जाता है।

परिस्थितिकी शास्त्र (Ecology) का तात्पर्य है पशुओं और वनस्पतियों के पारस्परिक सम्बन्धों तथा इनके पर्यावरण का अध्ययन (A study of animals and plants in their relations to each other and to their environment)। यह प्रकृति का वैज्ञानिक अध्ययन है, इसमें जैविक समुदायों का विशेष अध्ययन किया जाता है तथा इसका मानव पर क्या प्रभाव पड़ता है इसको भी स्पश्ट किया जाता है।

पर्यावरण को दो दृष्टियों से देखा जा सकता है –(1) भौतिक पर्यावरण तथा (2) आध्यात्मिक पर्यावरण। जीवों को दैहिक संतुष्टि प्रदान करने वाले भूमि, जल, वायु, वनस्पति आदि तत्व भौतिक पर्यावरण के अन्तर्गत आते हैं तथा आत्म संतुष्टि आध्यात्मिक पर्यावरण की परिणति है। आत्मसंतुष्टि से न केवल आध्यात्मिक पर्यावरण बल्कि भौतिक पर्यावरण भी शुद्ध होता है। वास्तव में सृष्टि एवं वातावरण का परस्पर सम्बन्ध ही पर्यावरण है, इसके संतुलन से ही पर्यावरण शुद्ध होता है।

प्रदूषित हो रहे पर्यावरण से मानव जाति के साथ–साथ पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व को भी खतरा है। उपभोक्तावादी संस्कृति के द्वारा जीवन के आवश्यक स्रोतों का तीव्रता के साथ अधिक मात्रा में दोहन किया जा रहा है कि प्राकृतिक तेल एवं गैस की बात तो दूर अब पीने के एवं सिंचाई हेतु पानी मिलना भी मुश्किल हो गया है। अतः मानव जाति के अस्तित्व के लिए यह आवश्यक हो गया है कि पर्यावरण को प्रदूषण से मुक्त करने का प्रयत्न प्रारम्भ किया जाय।

जैन धर्म ऐसा प्राचीनतम धर्म है जिसने पर्यावरण को गहराई से समझा तथा उसे धर्म एवं मानवता से जोड़ा। जैनाचार्य पर्यावरण समस्या से भलीभाँति परिचित थे और प्रदूषण की समस्या उनके सम्मुख थी इसलिए उन्होंने सर्वप्रथम व्यवस्था किया कि व्यक्ति यत्नपूर्वक चले, यत्नपूर्वक ठहरे तथा यत्नपूर्वक बैठे, यत्नपूर्वक भोजन करे तथा यत्नपूर्वक बोले इस प्रकार से संयत कर्मों द्वारा व पाप कर्मों में नहीं बंधता।

महावीर ने वनस्पतियों को भी विकलांग व्यक्तियों की तरह माना है। यह अंध, बधिर, मूक, पंगू और अवयवहीन हैं तथा इन्हें भी उसी प्रकार कष्टानुभूति होती है जिस प्रकार शस्त्रों के भेदन से मनुष्य को होती है। मनुष्य एवं प्रकृति के बीच शांतिपूर्ण सम्बन्धों हेतु यह आवश्यक है कि प्रकृति के क्रियाकलापों में मनुष्य द्वारा अनावश्यक हस्तक्षेप न किया जाय। ऐसा करने से प्रकृति का संतुलन बिगड़ता है। आज मनुष्य अपने स्वार्थ सिद्धि के लिए

जिस प्रकार से प्रकृति का शोषण कर रहा है उससे प्रकृति पूरी तरह असंतुलित हो गयी है। महावीर स्वामी द्वारा ढ़ाई हजार वर्श पूर्व यह उद्घोषणा की गयी थी कि प्राणी जगत एवं वनस्पति जगत में जीवन की उपस्थिति है। उन्होंने यह भी कहा था कि पृथ्वी, जल, वायु और अग्नि में भी जीवन है। उनका मानना था कि पृथ्वी, जल एवं वनस्पति पर आश्रित होकर अनेक प्राणी अपना जीवन व्यतीतत करते है इसलिए इनका दुरूपयोग या विनाश करना स्वयं अपने जीवन का विनाश करने के समान है। इसलिए इसे जैन धर्म में हिंसा की संज्ञा दी गयी है।

यहि हमें इस सृष्टि को बचाना है तो हमें तीर्थंकरो के पर्यावरण सिद्धान्त के आधार पर ही चलना होगा। तीर्थंकरों के लांछन तथा चिन्ह भी पशु–पक्षी से जुड़े हैं। आदि तीर्थंकर ऋषभदेव का चिन्ह वृषभ है। वृषभ भारतीय कृषि संस्कृति का आधार स्तम्भ है। यहाँ बैल से जुड़े घास के मैदान, साफ–स्वच्छ जल से भरे नदी, तालाब, हरी–भरी खेती सभी साकार हो उठते हैं। गज (अजितनाथ), अश्व (संभवनाथ), वानर (अभिनंदनाथ), चकवा (सुमितनाथ), मकर (पुष्पनाथ), गैंडा (श्रेयांसप्रभु), महिश (वासुपूज्य), शूकर (विमलनाथ), सही (अनन्तनाथ), हिरण (शांतिनाथ), छाग (कुंथुनाथ), कच्छप (मुनिसुव्रत), सर्प (पार्श्वनाथ), सिंह (महावीर) ये भी पशु–पक्षी मानव के लिए सहयोगी एवं उपयोगी हैं। इनके अतिरिक्त लालकमल (पद्मनाथ), नगर कुसुम (अरनाथ), नीलोत्पल (नभिनाथ), शंख (नेमिनाथ) प्रकृति विषयक है। जहाँ सौन्दर्य, शुद्ध वायु और सुगन्ध है। शंख, कच्छप और मकर जल की शुद्धता की ओर संकेत करते है। चन्द्रमा भी शीतलता, प्रकाश एवं स्वच्छता का प्रतीक है। ये सभी चिन्ह प्रतीकात्मक हैं और पर्यावरण की शुद्धता का भान कराते हैं। इसमें तनिक भी संदेह नही कि पर्यावरण की अनुभूति जैन विचारकों को हजारों वर्ष पूर्व थी। इसी कारण जैन धर्म में वन्य पशु, वन और वृक्ष इन सभी की सुरक्षा का ध्यान रखा गया है।

वनस्पति एवं व्यवहारिक जीवन का अटूट सम्बन्ध है। वैसे तो वनस्पति संरक्षण की बात सभी में की जाती है परन्तु जैन धर्म की सम्पूर्ण धुरी ही वनस्पति संरक्षण है। भरतबाहुबलीमहाकाव्य में वृक्ष वर्णनों के साथ–साथ ही वन संरक्षण का भी वर्णन मिलता है। आदिपुराण में वन संरक्षण एवं सघन वनों का जो वर्णन है, उसे अरण्य संस्कृति कहा जाता है। इसके अनुसार सम्पूर्ण विश्व का वृक्ष है जिसे 'लोक' कहा गया है। लोक के एक भाग पर मानव रहता है जिसे जम्बूद्वीप के नाम से जाना जाता है।

तीर्थंकरों के अनुसार एकेन्द्रिय होने के कारण वनस्पति जीवन से परिपूर्ण है। उनके अनुसार किसी भी जीव और वनस्पति को नष्ट नहीं करना चाहिए। आचारांग में कहा भी है– सव्वे पाणा सव्वे भूया, सव्वे जीवा सव्वे सत्ता ण हंतव्वा अर्थातु कोई भी प्राणी, कोई भी जीव जन्तु, कोई भी प्राणवान नहीं मारा जाना चाहिए, क्योंकि इनको नष्ट करने से सभी कष्टों में वृद्धि होगी। अचारांग ने ही आगे कहा है

सचित्तदल विग्गई पन्नी तंबुल–वत्थ–कुसुमेसु।

वाहण–समण–विलेवण, बम्भदिसि नाहण भत्तेसु।।

अर्थात् फूलों के प्रयोग में भी मितव्ययी होना चाहिए, यहाँ तक कि सूखे मेवों, खाद्यान्न बीजों आदि का उपयोग यथासंभव कम से कम करना चाहिए।

आगमों में वनस्पति में जीव होने का पूर्ण प्रमाण मिलता है। यहाँ तक कि इनमें दूसरी समस्त क्रियाओं की अनुभूति भी मानव की तरह ही होती है। आचारंग में लिखा है –

से बेकम- इमं पि जातिधम्मर्थ, एवं पि जातिधम्मयं

मनुष्य भी जन्म लेता है और वनस्पति भी जन्म लेती है।

इमं पि वुड्ढिधम्मयं, एयं पि वुड्ढिधम्मयं। यह भी वृद्धि धर्म वाला है और वनस्पति भी।

इमं पि छिण्णं मिलाति, एयं पि छण्णं मिलाति! मनुष्य भी कटा हुआ उदास होता है और वनस्पति भी काटने पर सूखने से निर्जीव हो जाती है। इमं पि आहारगं, एयं पि आहारागं! मनुष्य भी आहार करने वाला होता है और वनस्पति भी।

इमं पि अणितियं, एयं पि अणितियं, यह भी नाशवान होता है और वनस्पति भी नाशवान होती है।

इमं पि असासयं, एयं पि असासयं, मनुष्य भी हमेशा रहने वाला नहीं और वनस्पति भी नाशवान है।

इमं पि चयोवचइयं, एयं पि चयोवचइयं, नाशवान मनुष्य भी बढ़ने वाला व क्षय वाला होता है और वनस्पति भी बढ़ने वाली और नाशवान होती है।

इमं पि विप्परिणामधम्मयं, एयं पि विप्परिणामधम्मयं– मनुष्य भी परिवर्तन स्वभाव वाला होता है और वनस्पति भी परिवर्तन स्वभाव वाली होती है।

वनस्पति के उपयोग का निशेध करते हुए तीर्थंकरों ने कहा कि प्रचार–प्रचार और पूजा–पाठ में इनका उपयोग करना पाप है। कहा है –

एस खलु गंथे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु णिरए।

इच्चत्थं गढिए लोए जमिण विरूवरूवेहिं सत्थेहिं वणस्सतिकम्मसमारभेणं वणस्सतिसत्थं समारंभमाणे अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसति। यह आशक्ति है, यह मोक्ष है, यह मार है और यही नरक है। इन सभी चेतावनियों के उपरांत भी यदि मानव वनस्पति को नष्ट करता है तो सबसे बड़ा अहित करता है। आगमों के उपयोग की वस्तुओं को 26 प्रकार के समूहों में वर्गीकृत किया गया है। श्रावक के लिए, इनका परिमाण बताया गया है। नवम परिमाण फूल के बारे में बताता है– मुप्फविहि परिमाण। सातवां सब्जी से सम्बन्धित है– सागविहि परिमाण। उपयोग के दृष्टि से 24 प्रकार के व्यवसायों का निषेध बताया गया है, उन्हें '15 कर्मादान' कहते हैं। इनमें से प्रथम, द्वितीय तथा तेरहवां वनस्पति संरक्षण पर जोर देते हैं। इनमें से प्रथम 'इंगालकम्प' है अर्थात् वनस्पति से कोयला निर्माण का कार्य करना। कोयले के व्यवसाय में असंख्य वृक्ष काटे जा रहे हैं। ऐसा करना उचित नहीं, क्योंकि ये वृक्ष ही वायुमण्डल में विभिन्न स्रोतों से प्रवेश करने वाली जहरीली गैसों का अवशोषण करते हैं और जीव को जीवित रखते है। द्वितीय व्यवसाय 'वणकम्मे' है और तेरहवां दवग्गिदाणियाकम्मो जो वन व्यवसाय और वन दहन के बारे में बताता है। वस्तुतः इन्हें करना पाप है। आचारांगसूत्र में कहा गया है कि बुद्धिमान मानव वनस्पति को भी नष्ट नहीं करता।

मेघवीणेण सयं वणस्सइसत्थं समारंभेज्जा, णेव अण्णेहिं वणस्सइसत्थं

समारंभावेज्जा, णेव अण्णे वण्स्सतिसत्थं समारंभंते समणुजाणेज्जा।

जस्सेसे वणस्सइसत्थसमारंभा परिण्णाया भवंति से हु मुणी परिण्णयकम्मे त्ति बेमि।

हिंसा न करने के 5 नियम है। उनका सेवन अतिचार कहलाता है। इनमें से एक अतिचार 'छविच्छेद' है, जो यह बताता है कि औजार से लकड़ी काटना और छिद्र करना भी पाप है। पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री ने 'जैन धर्म' नामक पुस्तक में कतिपय वृक्षों के उपयोग का निषेध किया है। उनमें ऊमर, बड़, पीपल और गूलर का उपयोग वर्जित बताया गया है।

मानव समाज लकड़ी का उपयोग तो अधिकाधिक करता है, पर मानव कल्याण की इन धार्मिक एवं सांस्कृतिक चेतावनियों के बारे में या तो अनभिज्ञ है या लापरवाह। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त यहाँ तक कहते है कि मानव सभी खाने लगा है। अब तो निर्जीव वस्तुएँ खाना ही शेष रह गया है।

विहंगमो केवल पतंग जलचरो नाव ही,

चौपायों में भोजनार्थ, केवल चारपाई बच रही।

सभी वस्तुओं को खाने के बाद उड़ने वाले में पतंग, जलजीवों में नाव व चौपाये जानवरों में केवल चारपाई, यानी खाट ही खाना शेष है।

वनस्पति के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष अनेक लाभ है। सच तो यह है कि पृथ्वी पर जीवन का आधार मात्र वनस्पति ही है।

आदिपुराण में कहा गया है कि वन, संत एवं मुनिराज कल्याणकारक हैं। ये तीनों समस्त कष्ट दूर कर देते हैं। यहाँ तक कि इनकी छायामात्र में बैठने भर से थकान दूर हो जाती है। वनस्पति की विभिन्नता एवं सघनता के फलस्वरूप विशेष परिस्थितिकी तथ्वों

का निर्माण होता है। वनस्पति हार्दिक प्रसन्नता का चिन्ह है। इसका प्रसन्नता एवं शान्ति से उतना ही घनिष्ठ सम्बन्ध है जितना कि दूल्हा–दुल्हन के बीच पाया जाता है–

ये रत्युत्सुर्क वीक्ष्य वयस्कान्तं स पुश्पकम्।

बाणाङ्कितंयदुधानं वधूवरमिव प्रियम।।

वन विनाश रोकने के उपाय : कल्याण एवं सृष्टि के सुसंचालन हेतु वनस्पति का संरक्षण अति आवश्यक है। अकाट्य प्रमाण प्रस्तुत कर स्वयं जैन शास्त्रों ने इनका संरक्षण आवश्यक बताया है। भगवतीसूत्र में कहा गया है– 'पुढ़वीकाइया सव्वे समवेदणा समकिरिया' अर्थात् पृथ्वी की भाँति सभी कार्यों में समान संवेदनशीलता पाई जाती है। अणुसमयं अविरहिए अहारठ्ठे समुपज्जई अर्थात् वनस्पति अन्य की भाँति बिना किसी रूकावट के अपना भोजन पाती है। ये भाव वनस्पति में जीवन के तथ्य को प्रमाणित करते है एवं इसकी रक्षा हेतु अहिंसा के मार्ग की आवश्यकता हो प्रतिपादित करते है। इसके साथ ही साथ आचारांगसूत्र में मानव एवं अन्य जीवों के सह–अस्तित्व को बनाये रखने हेतु जोर दिया गया है। भविष्यपुराण में वृक्ष को पुत्र से भी अधिक महत्वपूर्ण माना गया है। पुत्र मृत्यु के समय आपकी सेवा करे या न भी करे, परन्तु वृक्ष आपकी जीवनपर्यन्त सेवा करता है।

वृक्ष के दोहरे लाभ मिलते हैं– एक ओर यह जहरीली गैसों को ग्रहण कर प्रदूशण कम करता है और दूसरी ओर प्राणवायु आक्सीजन देता है। वृक्ष काटने वाले को हत्यारा मान कर सजा देनी चाहिए। प्रकृति ने अपने अस्तित्व को नियमित करने हेतु स्थायी एवं वैज्ञानिक व्यवस्था कर रखी है। एक पशु 4 से 24 वर्श तथा मानव 40 से 60 वर्श तक औसत रूप में जीवित रहता है। किन्तु विशहरण हेतु वृक्ष प्रायः 60 से 200 वर्श या इससे भी अधिक जीवित रहते है। वस्तुतः मानव को स्वयं ही हत्या से बचने हेतु तुरन्त ही वनस्पति संरक्षण प्रारम्भ कर देनी चाहिए और ऐसा करके वह अपने जीवन को सफल बना सकता है। बढ़ते जल, वायु एवु मिट्टी प्रदूषण, बढ़ते चर्म एवं कैंसर रोग, बढ़ता तापक्रम आदि तो प्रलय की छाया मात्र है।

अतः हमें ध्यान रखना चाहिए कि अहिंसा, संयम और तप धर्म है। इससे ही सर्वोच्च कल्याण हो सकता है। जिसका मन सदा धर्म में लीन है, उस मनुष्य को देव नमस्कार करते हैं। अन्त मे निम्नलिखित तीर्थङ्करीय आभूषण सभी को पहनना चाहिए जो इस प्रकार है –

खामेमि सच्चे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे।

मित्ती मे सव्वभूएसु, वेंर मज्झं ण केणवि।।

अर्थात् मैं समस्त जीवों को क्षमा करता हूँ, सब जीव मुझकों क्षमा करें, मेरी सभी प्राणियों से मित्रता है, किसी से भी मेरा वैर नहीं है।

वस्तुतः हमें वही करना है जो हमारे जैनाचार हैं, हम उनके अनुसार आचरण करें। जो जैन धर्म का पालन करता है, वह पर्यावरण संतुलन का पोषक वह समर्थक हैं इस प्रकार जैन धर्म के सिद्धान्त ही प्रकृति के सन्तुलन व पर्यावरण का संरक्षण कर सकते है।

अगर मानव प्रकृति के साथ खिलवाड़ करता है, पर्यावरण को प्रदूषित करता है, तो समझ लीजिए, प्रकृति को भी हमें नष्ट करना आता है।

अतः अपने जीवन को धर्म से परिपूरित कीजिए, संसार में बनी हर चीज का उपयोग सोच समझ कर कीजिए।

और अन्त में,
यही अहिंसक है व्यवहार,
सबसे प्रीत दया और प्यार।
पेड़ लगाओ, प्राण बचाओ,
जीव दया का व्रत अपनाओ।
धुआँ–धुआँ, आकाश भरेंगे,
अपना सत्यानाश करेंगे।
पृथ्वी को क्यों नर्क बनायें,
वहाँ गंदगी न फैलाये।
अमृत जैसा जल अनमोल,
एक बूँद भी व्यर्थ न ढोल।
जैन धर्म है महान ...

पर्यावरण संरक्षण का है यही अभियान।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. चौधरी, गुलाब चंद्र, जैन साहित्य का वृहद इतिहास, वाराणसी, 1973.
2. कालेलकर, काका साहेब, महावीर का जीवन संदेश : युग के संदर्भ में, राजस्थान प्राकृत भारती संस्थान, जयपुर, 1982.
3. मुनि, मधुकर, आचारांग सुत्र.
4. ऋषि, अमोलक, आचारांग सुत्र.
5. मुनि, मधुकर, ज्ञाताधर्म कथा
6. जैन, पन्नालाल, पद्मपुराण (रविषेण), भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, 1958–59.
7. भुरामल शास्त्री के साहित्य में पर्यावरण संरक्षण– एक अध्ययन